Research Guru
Online Journal of Multidisciplinary Subjects (ISSN : 2349-266X)
UGC Approved Journal No. 63726
Impact Factor: 4.081
Volume-12, Issue-3, December-2018 www.researchguru.net

# डॉ.बाबासाहेब आम्बेडकर - बुद्ध और कार्ल मार्क्स

**Dr.Hasmukh Panchal**
Asst.Pro.- Sociology,Dep.Of Sociology, Gujarat Vidyapith,Randheja-382620,hasmukhp13@gmail.com,9429732401

**Abstract –**

डॉ.आम्बेडकर एक विचारक एवं तत्वचिंतक थे । उन्होने कई विचारको के विचारों को समझा था। उनमे उन्हों ने बुद्ध और कार्ल मार्क्स दोंनो को पढा और समझा भी। मार्क्स और बुद्ध के बीच 2381 बर्षो का अंतर हैं। कार्ल मार्क्स एक नया तत्वज्ञानी, राजनीतिज्ञ, समाजशास्त्री, अर्थशास्त्रीय पद्धति का शिल्पकार। दूसरी ओर बुद्ध को धर्म के संस्थापक से ज्यादा नहीं माना जाता है, जिसका राजनीति या अर्थशास्त्र से कोई संबंध नहीं है। किन्तु डॉ.आम्बेडकरजी ने दोनो महापुरूषो को पढा और चिंतन किया है। दोनो महापुरूषो के विचारों मे से कोन से विचार उनको स्पर्श करने वाले, असरकारक बने ये प्रस्तुत शोधपत्र में प्रगट करने की कोशिष है। प्रस्तुत शोधपत्र के प्रथम भाग में विषय प्रवेश किया है, दूसरे में उदेश्य, तीसरे में विश्लेषण ओर चौथे में सारांश लिखा है।

**शब्द कूंची** - डॉ.आम्बेडकर, बुद्ध, कार्ल मार्क्स, समाजशास्त्री, अर्थशास्त्री

## 1. प्रस्तावना -

डॉ.आम्बेडकर अपने समय के सबसे सुपठित व्यक्तियों में थे। उन्होने बताया की ये राजनीतिक अधिकार कागज पर रह जाएंगे यदि आर्थिक समानता स्थापित न की गई। स्वाधीनता, भाईचारा, समानता, राजनीतिक अधिकारों के रूप में, स्वीकार किए जाते है किन्तु संपत्ति पूंजीपतियों के हाथ में रहती है। जब तक आर्थिक समानता न होगी तब तक वास्तविक जनतंत्र स्थापित नहीं हो सकता। उन्हों ने अपनी अंग्रेजी रचनावली Writing and Speeches vol.03 मे उनकी एक प्रकाशित पुस्तक के अध्याय में शीर्षक है - Buddha and Karl Marx. इस अध्याय के आरंभ में उन्होंने लिखा है कि उन्होंने दोनों को पढा है। दोनों की विचारधारा से उन्हें दिलचस्पी रही हैं। इससे दोनों की तुलना करने के लिए वह बाध्य हुए। बुद्ध का जन्म 563 बीसी में हुआ था और मार्क्स का जन्म 1818 एडी में हुआ था। मार्क्स और बुद्ध के बीच 2381 बर्षो का अंतर हैं। कार्ल मार्क्स एक नया तत्वज्ञानी, राजनीतिज्ञ, समाजशास्त्री, अर्थशास्त्रीय पद्धति का शिल्पकार। दूसरी ओर बुद्ध को धर्म के संस्थापक से ज्यादा नहीं माना जाता है, जिसका राजनीति या अर्थशास्त्र से कोई संबंध नहीं है। किन्तु डॉ.आम्बेडकरजी ने दोनो महापुरूषो को पढा और चिंतन किया है वो प्रस्तुत शोधपत्र में प्रगट करने की कोशिष है।

## 2. उदेश्य -

1. बुद्ध और कार्ल मार्क्स के विचारो को जानना।

2. बुद्ध और कार्ल मार्क्स के बारे में डॉ.आम्बेडकरजी के विचारो को जानना।

3. बुद्ध और कार्ल मार्क्स के विचार -

इस विषय का शीर्षक "बुद्ध और कार्ल मार्क्स" या तो दोनों ऐसे व्यक्तित्वों के बीच तुलना या इसके विपरीत का सुझाव देते है। समय की इतनी लंबी अवधि से विभाजित है और विभिन्न क्षेत्रों के विचारों के साथ कब्जा कर लिया है, अजिब लगना सुनिश्चित हैं। मार्क्सवादियों तो आसानी से उन पर हंसते है और बुद्ध और कार्ल मार्क्स को समान स्तर पर इलाज करने के विचार को उपहास कर सकते है। मार्क्स इतना आधुनिक और बुद्ध इतने प्राचीन। मार्क्सवादियों का कहना है कि उनके गुरू की तुलना में बुद्ध सिर्फ आदिम होना चाहिए। ऐसे दो व्यक्तियों के बीच क्या तुलना हो सकती है ? बुद्ध से मार्क्सवादि क्या सीख सकते है ? बुद्ध ने मार्क्सवादि को क्या सीखाया ? दोनो के बीच की तुलना में एक आकर्षण और दूसरा बोधप्रद है। दोनो को पढना और दोनों के बीच की तुलना में दोनों की विचारधारा में दिलचस्पी रखने से मुझे मुझ पर बल मिलता है। यदि मार्क्सवादियों ने अपने पूर्वग्रहों को वापस रखदिया और बुद्ध का अध्ययन किया और समझ लिया कि वह क्या खडा था, तो मुझे यकीन है कि वे अपने द्रष्टिकोण को बदल देंगे। यह उम्मीद करने के लिए बिलकुल जरूरी हैं कि बुद्ध में उपहास करने के लिए निर्धारित किया गया हैं कि वे प्रार्थना करने के लिए बने रहेंगे। लेकिन यह इतना कहा जा सकता है कि उन्हें पता चल जाएगा कि बुद्ध की शिक्षाओ में कुछ है जो ध्यान देने के लिए उनके समय के बराबर है। परंतु दोनों विचारकों के विचारो को जानने की कोशिस करते है।

3.1. बुद्ध के विचार - बुद्ध आमतौर पर अहिंसा के सिद्धांत के साथ जुडा हैं। किन्तु शायद ही कोई यह जानता है कि बुद्ध ने जो सिखाया है वह बहुत विशाल है।

1) एक स्वतंत्र सोसायटी के लिए धर्म आवश्यक है।
2) धर्म को जीवन के तथ्यों से संबंधित होना चाहिए, सिद्धान्तो से नहि और भगवान के बारे मे चिंतन, आत्मा, स्वर्ग, पृथ्वि से करना चाहिए।
3) भगवान को धर्म का केन्द्र बनाना गलत है।
4) धर्म के केन्द्र के रूप में आत्मा का उद्धार करना गलत है।
5) धर्म का केन्द्र बनने के लिए पशु बलिदान करना गलत है।
6) वास्तविक धर्म मनुष्य के ह्रदय में रहता है, न कि शास्त्रो मे।
7) मनुष्य और नैतिकता धर्म का केन्द्र होना चाहिए। यदि नहीं, तो धर्म एक क्रुर अंधविश्वास है।
8) सभी इन्सान समान है।
9) कुछ भी स्थायी या सनातन नही हैं। हर चीज को बदलना है। होने के नाते सदा होता ही रहा है।
10) प्रत्येक चीज का कारण कानून के आधीन है।

11) युद्ध गलत है जब तक कि यह सत्य और न्याय के लिए नही है।

12) कुछ भी अंतिम नही है।

13) विजेता के पास कर्तव्यो की हार है।

यह बुद्ध के पंथ एक सारांश रूप है। कैसे प्राचीन बातें ताजा और विस्तृत हैं, एवं कैसे गहरी उनकी शिक्षाएं है।

3.2 कार्ल मार्क्स के विचार - कार्ल मार्क्स को यह साबित करने में अधिक दिलचस्पी थी कि उनका समाजवाद वैज्ञानिक था। उनका अभियान पूंजीपतियों के विरुद्द था क्योंकि यह उन लोगों के खिलाफ था जिन्हें उन्होंने यूटोपियन सोशलिस्ट्स कहा था। कार्ल मार्क्स के समस्त सिद्धान्तो को स्थापित करने की तुलना में कोई अन्य उदेश्य नहीं था। विवाद है कि समाजवाद का उनका ब्रांड अपरिहार्य था तथा अपरिहार्य है और यह समाज इसके लिए आगे बढ रहा था और ऐसा कोई भी इसके मार्च को रोक नहीं सकता था। कार्ल मार्क्स ने अपने इस विवाद को साबित करने के लिए परिश्रम किया।

1) मार्क्स कहते हैं कि दर्शन का उदेश्य दुनिया का पुन:निर्माण करना है और ब्रह्मांड की उत्पत्तिकी व्याख्या करना नहीं है।
2) जो बल इतिहास के पाठ्यक्रम को आकार देता है, वह मुख्य रुप से आर्थिक है।
3) यह समाज दो वर्गो - मालिकों और श्रमिकों मे विभाजित है।
4) हंमेशा दो वर्गो के बीच एक वर्ग विवाद होता है।
5) श्रमिकों का उपयोग उन मालिकों द्वारा किया जाता है, जो अधिशेष मूल्य का दुरुपयोग करते है, जो मजदुरों के श्रम का नतीजा है।
6) यह शोषण उत्पादन के साधनों के राष्ट्रीयकरण द्वारा समाप्त किया जा सकता है, अर्थात निजी संपत्ति का उन्मूलन।
7) यह शोषण श्रमिकों की अधिक से अधिक दिक्कत के लिए अग्रणी है।
8) मजदूरों की बढती दिक्कत से मजदूरों के बीच एक क्रांतिकारी भावना होती है और क्लास संघर्ष में वर्ग संघर्ष का रुपांतरण होता है।
9) मालिकों की संख्या के मुकाबले, मजदूरों ने राज्य को कब्जा करने के लिए बाध्य किया है एवं अपने शासन की स्थापना, जिसमें उनहोंने सर्वहारा वर्ग के तानाशाही को बुलाया।
10) ये कारक अप्रतिरोध्य है और इसलिए समाजवाद अनिवार्य है।

3.3 बुद्ध और कार्ल मार्क्स के बारे में डॉ.आम्बेडकरजी के विचार -

धर्म विज्ञान - आम्बेडकर ने बुद्ध की मूल स्थापनाएं प्रस्तुत की हैं। उनमें पहले यह है- स्वाधीन समाज के लिए धर्म आवश्यक है। धर्म विज्ञान के अनुरुप होना चाहिए। यदि धर्म विज्ञान के अनुरुप न होगा तो वह अपना सम्मानजनक स्थान खो देगा। समय बीतने पर वह विखंडित होकर नष्ट भी हो सकता है। यदि धर्म को क्रियाशील बने रहना है तो उसे विवेक के

अनुरुप होना चाहिए और विवेक विज्ञान का ही दूसरा नाम है। सामाजिक-नैतिक तंत्र के रुप में धर्म को स्वाधीनता, समानता और भाईचारे के बुनियादी सिद्धांत स्वीकार करने होंगे। जब तक धर्म सामाजिक जीवन के इन तीन बुनियादी सिद्धांतो को स्वीकार नहीं करता, तब तक उसका विनाश निश्चित है। धर्म को यह न करना चाहिए कि वह निर्धनता को पवित्र माने या उसे महिमामंडित करे। जिनके पास धन है, वे उसे त्यागें, तो यह गौरव का विषय हो सकता है। परंतु निर्धनता गौरव का विषय नहीं हो सकती। निर्धनता को गौरव का विषय बनाना धर्म को चौपट करना है, अपराध और दुराचार को स्थायी बनाना है, संसार को जीवित नरक बना देना है। एकमात्र धर्म जिसमें ये सभी सिद्धांत समाहित हैं, बौद्ध धर्म है। किसी भी धर्म का प्रेमी हो, वह समझता है उसका धर्म सभी युगों, सभी देशों, सभी अवस्थाओं के लिए आदर्श है।

वर्ग-संघर्ष - आम्बेडकरजी ने कहा है कि जहां तक वर्ग-संघर्ष के प्रति बुद्ध के अपने द्रष्टिकोण का सवाल है, उनका अष्टांग मार्ग का सिद्धांत मानता है कि वर्गसंघर्ष का अस्तित्व है और दु:ख का कारण यह वर्गसंघर्ष है। जितने भाववादी विचारक हैं, वे वर्गो के संगठन में, वर्गसंघर्ष द्वारा समाज को बदलने में विश्वास नहीं करतें। व्यक्ति को चाहिए, स्वयं को बदले। यदि सभी व्यक्ति सुधर जाएं तो सारा समाज सुधर जाएगा। अष्टांग मार्ग का संबंध व्यक्ति के व्यवहार, व्यक्ति के आचरण से अवश्य है। परंतु उसका कॉई संबंध वर्ग के आचरण अथवा वर्गसंघर्ष से नहीं है। दु:ख की जगह यदि शोषण पढा जाए तो बुद्ध मार्क्स से बहुत दूर नहीं हैं। किन्तु जो दु:ख राजा, पुरोहित और प्रजा सभी को है, उसे शोषण का नाम कैसे दिया जा सकता है ?

व्यक्तिगत संपत्ति को नकारना - यह बौद्ध धर्म और मार्क्सवाद में एक सामान्य बात प्रतीत होती है। भिक्षुओं के लिए बुद्ध ने संपत्ति त्यागने पर जोर दिया। रुस में साम्यवाद के जो नियम हैं, उनसे ये नियम अधिक कठोर हैं। क्या भारत और क्या यूरोप, सामंती व्यवस्था की विशेषता यह है कि शासक वर्ग तो अपने भाग की सारी सामग्री एकत्र करता है परंतु अपनी सहायता के लिए वह तपस्वियों का एक छोटा समुदाय पालता हैं। एक छोटा समुदाय स्वयं तपस्या करता है और दूसरों को भी तपस्या और त्याग का उपदेश देता है। परंतु जो उत्पादन के साधनों के मालिक हैं, विशेष रुप से सामंती व्यवस्था में, जो भूस्वामी हैं, वे कभी अपनी संपत्ति नहीं छोडते। सामंती व्यवस्था की व्यक्तिगत संपत्ति और पूंजीवादी व्यवस्था की व्यक्तिगत संपत्ति, दोनों में अंतर होता है। व्यक्तिगत संपत्ति और वर्गो के अभ्युदय के पहले सभी समाज कबीलाई जीवन बिताते है। वे रक्त-संबंध पर आधारित होते है। उत्पादन के साधनों पर सामूहिक स्वामित्व होता है। श्रम का विशेषीकरण न होने से यह उत्पादन बहुत पिछडे हुए ढंग का होता है। सभ्यता का विकास व्यक्तिगत संपत्ति के अभ्युदय के साथ जुडा हुआ हैं। यह व्यक्तिगत संपत्ति पहले पूरे कुटुम्ब की संपत्ति होती है। फिर कुटुंबों में विषमता पैदा होती है। श्रम के विशेषीकरण से उत्पादन बढता है, सभ्यता का विकास होता है।

विनिमय के विकास से जन समाज एक-दूसरे के निकट आते है। साहित्य, कला, दर्शन, विज्ञान आदि का विकास इन्हीं नई परिस्थितियों में होता है। बुद्ध के सामने रक्त संबंधों वाले पुराने गण समाज थे। ये टूट रहे थे। टूटने का कारण व्यक्तिगत संपत्ति का अभ्युदय था। इसलिए वह सारे पापों की जड इस व्यक्तिगत संपत्ति को मानते थे। पर संपत्ति को त्यागने की बात वह केवल भिक्षुओं से कहते थे। यदी सभी लोग ब्रह्मचारी हो जाते तो एक पीढी के बाद संघ में भरती करने के लिए नए भिक्षु न मिलते।

समाजवादी व्यवस्था - समाजवादी व्यवस्था मे व्यक्तिगत संपत्ति को पूरी तरह निर्मल नहीं किया जाता। प्रत्येक मनुष्य श्रम करता है। श्रम के अनुसार उसे श्रम-फल मिलता है। यह उसकी निजी संपत्ति होती है। उत्पादन के साधनों पर पुरे समाज का अधिकार होता है। इस तरह पूंजीवादी व्यवस्था में बडे पूंजीपतीयों की जो संपत्ति शोषण का स्त्रोत होती है, वह समाजवादी व्यवस्था में जनसंपत्ति बन जाती हैं। आम्बेडकर का दावा था कि मार्क्स ने विचारधारा की जो इमारत खडी की थी, उसका बहुत बडा भाग ध्वस्त हो गया है। उनके अनुसार मार्क्सवादियों का यह विचार कि समाजवाद अनिवार्य है, पूरी तरह गलत साबित हो चुका है। समाजवाद अनिवार्य है, इस स्थापना का अर्थ आम्बेडकर ने यह लगाया है कि मनुष्यों के प्रयत्न के बिना समाजवाद आ जाएगा। इसलिए उन्होंने तर्क दिया है - रुस में कम्युनिष्ट किसी तरह के मानविय प्रयत्न के बिना, किसी अनिवार्य चीज की तरह, नहीं आया। वहां क्रान्ति हुई काफी योजनाबद्ध कार्य हुआ। काफी हिंसा हुई। काफी खून बहा। उसके बाद कम्युनिजम आया। बाकी दुनिया अभी सर्वहारा डिक्टेटरशिप के आने की राह देख रही है। कोई अब यह स्वीकार नहीं करता कि इतिहास की आर्थिक व्याख्या उसकी एकमात्र व्याख्या है। कोई यह स्वीकार नहीं करता कि सर्वहारा वर्ग निरंतर मुफलिस होता गया है। राज्यसत्ता के बारे में कहते हैं, स्वयं कम्युनिस्ट स्वीकार करते हैं कि राज्यसत्ता स्थायी डिक्टेटरशिप है। यह उनके राजनीतिक दर्शन में कमजोरी है। वे इस तर्क की शरण लेते हैं कि अंततः उसका अवसान हो जाएगा। इस प्रसंग मे उन्हें दो प्रश्नों का उत्तर देना है - उसका अवसान कब होगा ? और उसका अवसान होने पर राज्यसत्ता का स्थान कौन लेगा ?

सामाजिक परिवर्तन - सामाजिक परिवर्तन वस्तुगत परिस्थितियों द्वारा निर्धारित होते है। इसका यह अर्थ नहीं है कि इस परिवर्तन में मनुष्यों की सक्रिय भूमिका नहीं होती। मार्क्स और एंगल्स ने, और उनके बाद लेनिन ने, मजदूरों को संगठित करने का बराबर प्रयत्न किया और इसी प्रयत्न के बल पर रूसी क्रांति सफल हुई। क्रांति के पीछे योजनाबद्ध कार्य था, यह बात सही है। परंतु इस तरह का कार्य सदा ही मार्क्सवादी कार्यक्रम का अंग रहा है। सामाजिक विकास में आर्थिक कारण मुख्य होते है, यह बात तो स्वयं आम्बेडकर मानते है। इन कारणों की प्रधानता का अर्थ यह नहीं है कि अन्य कारण होते ही नहीं है। अंग्रेजी राज में भारत कैसे निरंतर निर्धन होता गया, इसका विवेचन स्वयं आम्बेडकरने किया है।

किन साधनों से समाजवादी लक्ष्य प्राप्त किया जाए ? हिंसा का प्रयोग किस सीमा तक उचित है ? आम्बेडकर कहते है - हिंसा का प्रयोग पूरी तरह छोडा नहीं जा सकता। जिन देशों में कम्युनिज्म नहीं है वहां भी हत्यारे को फांसी दी जाती है। फांसी देना क्या हिंसा नहीं है ? गैरकम्युनिस्ट देश दुसरे गैरकम्युनिस्ट देशों से युद्ध करते हैं। लाखों लोग मारे जाते है। क्या यह हिंसा नहीं है ? बहुत अच्छा सवाल है। गैरकम्युनिस्ट देशों के बीच युद्ध क्यों होते हैं? लोकतंत्र और शांति की रक्षा के नाम पर वे महायुद्ध रचते हैं जिनमें लाखों आदमी मारे जाते हैं।

इन युद्धों को रोकने के लिए जितना प्रयत्न कम्युनिस्टों ने किया, उतना और किसी ने नहीं। पहले विश्वयुद्ध के दौरान ही लेनिन ने शांति का नारा दिया था और रुसी जनता और फौज से कहा था- यद्ध से बाहर आओ, सभी देशों के साथ शांतिपूर्ण संबंध कायम करो।

यह स्पष्ट है कि बुद्ध द्वारा अपनाई जानेवाले साधनों को स्वैच्छिक मार्ग का अनुसरण करने के लिए अपने नैतिक स्वभाव को बदलकर एक व्यक्ति को परिवर्तन करना था। साम्यवादियों द्वारा अपनाई जाने वाला साधन समान रुप से स्पष्ट लघु और तेज है वो है - 1. हिंसा और 2. सर्वनाश की तानाशाही। साम्यवादियों का कहना है कि साम्यवाद की स्थापना के केवल दो साधन है, पहला हिंसा है जो मोजूदा सिस्टम को तोडने के लिए इसके कुछभी कम नहीं होगा और दूसरा सर्वहारा वर्ग की तानाशाही है। ये नई प्रणाली को जारी रखने के लिए पर्याप्त होगा। अब यह स्पष्ट है कि बुद्ध और कार्ल मार्क्स के बीच समानताए और अंतर क्या है। मतभेद साधनो के बारे में है और अंत दोनो के लिए आम है।

आमबेडकर ने तर्क किया है - भिक्षु संघ अत्यंत लोकतांत्रिक संस्था थी। प्रश्न यह है - क्या भिक्षु संघ ने कारिगरों और किसानों की सत्ताधारी या सत्ता में भगीदार बनाया था ? ऐसा उन्होंनें नहीं किया और न उस समय वब ऐसा कर सकता था। परंतु कम्युनिष्ट पार्टी ने 20वीं सदी की नई परिस्थितियों में यह कार्य रुस में किया। 7 नवम्बर की पैत्रोग्राद की मजदूर-सैनिक-सोवियत ने अपने प्रस्ताव में कहा - सोवियत का द्रढ विश्वास है कि क्रांति के द्वारा मजदूरों और किसानों की जो सरकार सोवियत सरकार के रुप में गठित होगी, जो शहरी सर्वहारा के लिए समस्त निर्धन किसान-समुदाय का समर्थन सुनिश्चित करेगी, वह समाजवाद की और द्रढतापूर्वक बढेगी। आम्बेडकर ने इस बात के लिए कम्युनिस्टों की आलोचना की है कि उन्होंने बहुत से आदमियों को मारा। उन्हें मारे बिना वे उनकी संपत्ति ले लेते तो ज्यादा अच्छा था। क्रांति से पहले कितने बर्षो तक कितने कम्युनिस्ट मारे गए, कितनों को देश निकाला दिया गया, कितनों को कारावास का दंड मिला ? लेनिन जैसे लोग देश के बाहर रहने पर क्यों बाध्य हुए ? इन प्रश्नों का उत्तर भी देना चाहिए था। जमीदारों और पूंजीपतियों के तमाम उत्पीडन के बावजूद कम्युनिस्ट पार्टी शक्तिशाली बनी, इसलिए कि वह पूंजीवादी शासन समाप्त करके किसानों और मजदूरों को सत्ताधारी बनाना चाहती थी।

राज्यसत्ता का अवसान कब होगा ? सामूहिक स्वामित्व वाले गण राज्यसत्ता नहीं होती। सामाजिक विकास क्रम में उसका अभ्युदय होता है। फिर इसी क्रम में आगे चलकर उसका अवसान भी होता है। समाज में वर्ग बनने पर संपत्तिशाली वर्ग उत्पादक समुदायों को अपने शासन में रखने के लिए राज्यसत्ता का उपयोग करते है। राज्यसत्ता उत्पीडन का कारण बन जाती है। साथ ही वह अर्थतंत्र, विधि-व्यवस्था आदि के संचालन का काम भी करती है। समाजवादी व्यवस्था में वह वर्ग उत्पीडन का साधन तभी तक रहती है जब तक शोषक वर्ग शक्तिशाली रहते हैं। उसके बाद उसकी वह भूमिका समाप्त हो जाती है। परंतु अर्थतंत्र, विधि व्यवस्था आदि के संचालन की उसकी भूमिका बनी रहती है। राज्यसत्ता का अवसान होगा, यह बात इस परिप्रेक्ष्य में कही गई थी कि संसार में पूंजीवादी व्यवस्था समाप्त हो गई है और विश्व पैमाने पर उसकी जगह समाजवादी व्यवस्था कायम हुई है. एक महादेश में समाजवादी व्यवस्था कायम हुई है। महादेश होने पर भी उसके मुकाबले में पूंजीवादी संसार बहुत बडा था। उसकी अर्थशक्ति, सैन्य शक्ति बहुत बडी थी। उसके घेराव में राज्यसत्ता के अवसान की बात सोचना आत्महत्या की तरह था। परंतु यदि विश्व पैमाने पर पूंजीवादी व्यवस्था समाप्त हो जाए तो यह निश्चित है, समाजवादी देशों में राज्यसत्ता की भूमिका बदल जाएगी। उसकी दंडधारी भूमिका समाप्त हो जाएगी। वह केवल
अर्थतंत्र, विधि व्यवस्था आदि के संचालन का काम करेगी। गण-व्यवस्था में भी लोग सभाओ और परिषदों के द्वारा पूरे गण के कार्यों का संचालन करते है। उसी तरह समाजवादी व्यवस्था में ये सभाऐं और परिषदें कार्य संचालन करेंगी परंतु वे वर्तमान साज्यसत्ता से बिल्कुल भिन्न कोटि की होंगी।

भारत के प्रसंग में रूष की डिक्टेटरशिप का स्मरण करते हुए आम्बाडकर ने लिखा - यह दावा किया गया था की रूष की कम्युनिस्ट डिक्टेटरशिप ने आश्चर्यजनक सफलताएं प्राप्त की हैं। इसे कोई अस्वीकार नहीं कर सकता। इसी कारण मेरा कहना है कि सभी पिछडे हुए देशों के लिए रुसी डिक्टेटरशिप अच्छी चीज होगी। पर इस तर्क से यह सिद्ध नहीं होता कि यह डिक्टेटरशिप स्थायी होगी। मानवता केवल आर्थिक मूल्य नहीं चाहती, वह आध्यात्मिक मूल्य भी चाहती है। स्थायी डिक्टेटरशिप ने आध्यात्मिक मूल्यों की ओर ध्यान नहीं दिया और ऐसा लगता है, उनकी ओर ध्यान देने की उसे इच्छा भी नहीं है। आम्बेडकर ने धर्म के नैतिक पक्ष पर जोर दिया है। यदि वह नैतिक मूल्यों को आध्यात्मिक मूल्य कहते हैं तो इस पर कोई आपत्ति नहीं है। पूंजीवादी व्यवस्था को बदले बिना ये नैतिक मूल्य अमल में नहीं लाए जा सकते। यदि कोई धर्म पूंजीवादी व्यवस्था को बदलने का प्रयत्न करता है, तो उसे कोई दूसरा नाम देना उचित होगा। आम्बेडकर चाहते हैं कि आदर्श धर्म विज्ञानसम्मत हो। तब धर्म का स्थान वैज्ञानिक विचारधारा क्यों न ले ?

4. सारांश -

डॉ.आम्बेडकरजी समाज के विवेकशील आलोचक थे। उनका संपूर्ण चिन्तन और दर्शन सामाजिक क्रांति के लिए है। वह प्राय: भौतिकवादी द्रष्टिकॉण से समस्याओं पर विचार करते हैं। सामाजिक विवेचन में ईश्वर के दखल देने के लिए वह हिंदू धर्म को जिम्मेदार मानते थे। इसलिए उन्होंने सोचा, अछुत बौद्ध हो जाएं तो उनकी समस्या हल हो जाएगी। लेकिन बौद्धों में भी पुरोहित होते हैं, यह बात आम्बेडकरजी जानते थे। पुरोहितवाद का विरोध करना जरुरी था, वे पुरोहित किसी भी धर्म के हों। आम्बेडकर का एक विचार था, रुसी क्रांति में हिंसा बहुत हुई है, यह बुरी बात है। परंतु यदि थोडी-सी हिंसा से संपत्ति सर्वहारा लोगों में बांट दी गई हो, समाज से असमानता दूर कर दी गई हो, तो उसे बुरा नहीं कहना चाहिए। उन्हों ने बौद्ध धर्म की जो व्याख्या की, वह बहुत कुछ भौतिकवाद के अनुसार की थी। अंधविश्वासों के विरुद्ध संघर्ष करने में उनकी विवेकशीलता हमारा मार्गदर्शन कर सकती है।

संदर्भ सूची -


1) दोषी शम्भुलाल और प्रकाशचन्द्र जैन (2002) प्रमुख समाजशास्त्रीय विचारक,रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर
2) भीमराव रामजी आम्बेडकर (2012) बुद्ध और कार्ल मार्क्स, प्रबुद्ध भारत प्रकाशन, नागपुर
3) सिंह वी.एन. और जनमेजय सिंह (2005) भारत में सामाजिक आन्दोलन, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर
4) शर्मा रामविलास (2008) गांधी. आम्बेडकर, लोहिया और भारतीय इतिहास की समस्याएं, वाणी प्रकाशन,दिल्ली.
5) कीर्ति विमल (2011) बौद्ध आचार्य और उनका योगदान,आकाश पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्युटर्श,गाजियाबाद
6) कीर्ति विमल (2013) डॉ.बाबासाहेब आम्बेडकर और उनका चिन्तन,लता साहित्य सदन,गाजियाबाद
7) B.R.Ambedkar ,Buddha or Karl Marx, Digital Publication, Japan.
8) Internet.